ੴ सतिगुर प्रसादि॥

सेवा से बड़ा कोई धर्म नहीं है और यह धर्म उन्होंने पूरे जीवन निभाया।

गुरुवाणी:

सेवा करत होइ निहकामी॥ तिस कउ होत परापति सुआमी॥

(अंग क्रमांक 286)

जो सेवक निष्काम भावना से गुरु की सेवा करता है, वह प्रभु को पा लेता है।

भावार्थ:

स्वर्गीय वीर जी ने सेवा को अपने जीवन का आधार बनाया। उन्होंने इसे बोझ नहीं, बल्कि प्रभु तक पहुँचने का सुंदर मार्ग समझा। यह वाक्य उनके जीवन-सिद्धांत का सार है।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

जो जीवन दूसरों के लिए जलता है, वही युगों तक रोशनी देता है।

गुरुवाणी:

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥

(अंग क्रमांक 286)

इस दुनिया में रहते हुए ही यदि जीव सेवा-सुमिरन करता रहे,तभी प्रभु के दरबार में बैठने के लिए स्थान प्राप्त होता है।

भावार्थ:

स्वर्गीय सुरिंदर वीर जी निश्चय ही उस दिव्य स्थान के अधिकारी हैं। उनका जीवन, वास्तव में, "दूसरों के लिए जलने वाली वह लौ" था, जो अब भी हमारे अंतर्मन को रोशन कर रही है।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

हर सुबह स्व. सुरिंदर वीर जी अरदास के साथ शुरू करते और सेवा में दिन लगाते"

गुरुवाणी:

गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ ॥दुखु परहरि सुखु घरि लै जाइ ॥

(अंग क्रमांक 2)

प्रभु का गुणगान करो, उसे प्रेम से सुनो और हृदय में श्रद्धा रखो;
इससे दुख दूर होते हैं और आत्मिक सुख की प्राप्ति होती है।

भावार्थ:

यह उन व्यक्तियों पर पूर्णतः लागू होता है, जो हर दिन सच्चे भाव से अरदास करते हैं और सेवा के माध्यम से संसार को सुख पहुंचाते हैं।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने दिखाया कि सच्चा नेतृत्व शांति, प्रेम और कर्म से होता है।

गुरुवाणी:

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥

(अंग क्रमांक 870)

विनम्रता और मधुरता ही सभी गुणों का सार है।

भावार्थ:

विनम्र और कर्मशील नेतृत्व की यही असली परिभाषा है, जिसे स्व. सुरिंदर वीर जी ने अपने जीवन से प्रकट किया।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

प्रत्येक व्यक्ति स्व. वीर जी लिए खास था - चाहे नया हो या पुराना।

गुरुवाणी:

सभ महि जोति जोति है सोइ ॥ तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥

(अंग क्रमांक 13)

हर एक में वही एक ज्योति (प्रभु का प्रकाश) है; उसी के प्रकाश से सबको रोशनी प्राप्त होती है।

भावार्थ:

हर व्यक्ति में परमात्मा को देखने वाला दृष्टिकोण — यही समदृष्टि स्व. सुरिंदर वीर जी में थी।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. वीर जी केवल मिलते नहीं थे, बल्कि लोगों के जीवन में उतरते थे।

गुरुवाणी:

जिसु मिलिऐ मनि होइ अनंदु सो सतिगुरु कहीऐ ॥

(अंग क्रमांक 168)

जिससे मिलने से मन को आनंद (आत्मिक तृप्ति और प्रसन्नता) प्राप्त होती है - वही सच्चा परम गुरु है।

भावार्थ:

यह वाणी दर्शाती है कि स्व. सुरिंदर वीर जी केवल मिलते नहीं थे अपितु लोगों के दिल में उतरकर उन्हें आत्मिक आनंद देते थे।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. वीर जी ने समाज को बाँटा नहीं, जोड़ा।

गुरुवाणी:

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥

(अंग क्रमांक 2)

सभी जीवों का एक ही दाता (परमात्मा) है, वह मुझसे कभी न भूले।

भावार्थ:

जब सभी एक ही दाता की संतान हैं, तो समाज में विभाजन का कोई स्थान नहीं - यही जोड़ने की शिक्षा है।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. वीर जी को परंपराओं से प्रेम था और नवाचार से आत्मीयता।

गुरुवाणी:

मूलु पछाणहि ताँ सहु जाणहि मरण जीवण की सोझी होई ॥

(अंग क्रमांक 441)

जो अपने आध्यात्मिक मूल (जड़) को पहचानता है, उसे सच्चा लाभ प्राप्त होता है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी ऐसे ही साधक थे - जिन्होंने गुरु परंपराओं की पहचान को आत्मसात करते हुए आधुनिक समाज के लिए उपयोगी नव दृष्टिकोण अपनाए।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्वर्गीय सुरिंदर वीर जी ने रिश्तों को निभाने में कभी कमी नहीं रखी

गुरुवाणी:

सचु मिलै सचु ऊपजै सच महि साचि समाइ ॥

(अंग क्रमांक 441)

जब सच्चे से सच्चा मेल होता है, तो उससे और भी सच्चाई उत्पन्न होती है, और अंत में वही व्यक्ति सच्चे में समा जाता है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी ने अपने संबंधों में इसी "सच्च" (सत्य और विश्वास) को आधार बनाया - चाहे वह पारिवारिक हो या सामाजिक।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी भले चले गए, पर उनकी गूंज हर हृदय में जीवित है।

गुरुवाणी:

ऊच अथाह बेअंत सुआमी सिमरि सिमरि हउ जीवाँ जीउ ॥
(अंग क्रमांक 99)

अनंत और असीम स्वामी का लगातार स्मरण कर, मैं वास्तव में जीवित रहूँ या न रहूँ"

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी की गूंज आज भी ऐसी स्मरण-आधारित ऊर्जा है, जो हमें 'जिन्दा' रखती है और हमारे हृदयों को प्रेरित रखती है।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. वीर जी ने कभी किसी से तुलना नहीं की - क्योंकि वह जानते थे कि हर आत्मा में वाहिगुरु जी की झलक है।

गुरुवाणी:

सभ महि जोति जोति है सोइ ॥ तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥

(अंग क्रमांक 13)

सब में वही एक ज्योति (प्रकाश) समाई हुई है। उसी के प्रकाश से सभी में प्रकाश होता है।

भावार्थ:

हर जीव में एक ही परमात्मा की ज्योति है। स्व. वीर जी ने गुरमत दृष्टि से हर आत्मा में उसी का अंश देखा और कभी तुलना नहीं की।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी का मौन एक उपदेश की तरह था - बिना बोले भी वह बहुत कुछ कह जाते थे।

गुरुवाणी:

जिथै बोलणि हारीऐ तिथै चंगी चुप ॥
(अंग क्रमांक 149)
जहाँ शब्दों से हार स्वीकार हो जाती है वहाँ मौन श्रेष्ठ है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी का मौन इसी तरह आत्मा की गहराई से बजता उपदेश था - बिना बोले, पर भीतर की सच्ची अनुभूति से सब कुछ कह जाता था।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी की वाणी में वह मिठास थी, जो घावों को भी सांत्वना देती थी।

गुरुवाणी:

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥

(अंग क्रमांक 470)

हे नानक! विनम्रता सबसे मधुर है - यही अच्छे गुणों का सार है।

भावार्थ:

जिस प्रकार सुरिंदर वीर जी की वाणी अमृत जैसी लगती थी और श्रोताओं के हृदय में बस जाती थी, उसी प्रकार गुरु वाणी आत्मा को पोषण देती है और घावों को भरती है।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी जहाँ जाते, वहाँ खुशियाँ ले जाते और लौटते तो अपनापन छोड़ आते।

गुरुवाणी:

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥ नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥(अंग क्रमांक 470)

जिन्होंने प्रभु के नाम का ध्यान किया और जीवन को सेवा में लगाया, वे इस संसार से उज्जवल मुख लेकर गए, और उनके साथ-साथ कई अन्य भी इस संसार-सागर से पार हुए।

भावार्थ:

ऐसे व्यक्ति की संगति में आने वाले भी कृपा का अनुभव करते हैं। वह स्वयं तो रूहानी आनंद में जीते है, पर साथ ही औरों को भी प्रेम और अपनत्व का मार्ग दिखाकर जाते हैं।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी के जीवन का हर कदम गुरुवाणी का व्यावहारिक रूप था।

गुरुवाणी:

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥ उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥अंग (क्रमांक 305)

गुरु का सच्चा शिष्य प्रातः उठकर प्रभु-नाम का स्मरण करता है और अमृत-सरोवर में ध्यानपूर्वक स्नान करता है।

भावार्थ:

सच्ची श्रद्धा केवल उपदेश सुनने में नहीं, जीवन के अनुशासन, कर्म और दिनचर्या में गुरुवाणी को उतारने में है। यही स्व. सुरिंदर वीर जी के जीवन का सार था।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी की दृष्टि आलोचना में भी अवसर की खोज करती थी।

गुरुवाणी:

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि ॥
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि ॥
(क्रमांक 775)

निंदा करना मूर्ख मनमुखों का काम है; वे कलंकित होकर नरक में गिरते हैं।

भावार्थ:

गुरमत में दूसरों की गलती खोजने की बजाय, अपने अंदर की बुराइयों को पहचानना और उन्हें दूर करना ही सच्चा साधन है। स्व. सुरिंदर वीर जी आत्मचिंतन में रमे रहे - यही उनका गुरमत जीवन था।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने दिखाया कि श्रद्धा सिर झुकाने में नहीं, जीवन में उतारने में है।

गुरुवाणी:

सरधा लागी संगि प्रीतमै इकु तिलु रहणु न जाइ ॥

(क्रमांक 928)

जब प्रभु-प्रेम में श्रद्धा जुड़ जाती है, तब मन ऐसा व्याकुल होता है कि प्रियतम परमात्मा से एक क्षण भी दूर रहना असहनीय हो जाता है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी प्रभु-प्रेम में रमे रहे; सेवा व सिमरन बिना एक क्षण भी नहीं ठहरते थे, यह परम भक्ति की अवस्था है और यही उनकी सच्ची श्रद्धा थी।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी के जीवन का हर कदम गुरुवाणी का व्यावहारिक रूप था

गुरुवाणी:

बैठत ऊठत सोवत जागत विसरु नाही तूं सास गिरासा ।।1।। रहाउ।। (अंग क्रमांक 378)

जब प्रभु-प्रेम में श्रद्धा जुड़ जाती है, तब मन ऐसा व्याकुल होता है कि प्रियतम परमात्मा से एक क्षण भी दूर रहना असहनीय हो जाता है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी प्रभु-प्रेम में रमे रहे; सेवा व सिमरन बिना एक क्षण भी नहीं ठहरते थे, यह परम भक्ति की अवस्था है और यही उनकी सच्ची श्रद्धा थी।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने लेने से पहले देने को जीवन का मंत्र बनाया।

गुरुवाणी:

लाहा साचु न आवै तोटा ॥ त्रिभवण ठाकुरु प्रीतमु मोटा ॥

(अंग क्रमांक 378)

सच्चा लाभ ऐसा होता है जिसमें कभी कोई कमी नहीं आती। तीनों लोकों का स्वामी, वह महान और प्रिय प्रभु है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी ने कभी 'क्या मिला' नहीं सोचा, बल्कि 'क्या दे सकता हूँ' को जीवन का आधार बनाया। यही सोच गुरवाणी के उस संदेश से जुड़ी है,

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने कर के दिखाया है कि जो संबंध निभाते हैं, उन्हीं से संबंध निभाए जाते हैं।

गुरुवाणी:

सभु को मीतु हम आपन कीना हम सभना के साजन।।

(अंग क्रमांक 671)

मैं सभी को अपना मित्र मानता हूँ और स्वयं को सबका बना चुका हूँ।
मैं सबका साजन हूँ - किसी से भेद नहीं रखता।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी का हृदय इतना विशाल था कि वे सभी से प्रेमपूर्वक जुड़ते थे। वे न किसी को छोटा मानते, न बड़ा - हर व्यक्ति में उन्हें वाहिगुरु का अंश दिखाई देता।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी के शब्दों में मिठास थी - जो दिल को छू जाती थी।

गुरुवाणी:

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥

(अंग क्रमांक 470)

हे नानक! नम्रता सबसे मधुर है - यही सारे उत्तम गुणों और अच्छाइयों का मूल सार है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी का संपूर्ण जीवन विनम्रता की प्रतिमूर्ति था। उन्होंने कभी अपनी सेवा, ज्ञान या पद को लेकर अभिमान नहीं किया, बल्कि सहज भाव से सबके साथ जुड़ते रहे।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने किसी को छोटा नहीं समझा - क्योंकि वह सबमें प्रभु का अंश देखते थे।

गुरुवाणी:

सभ महि जोति जोति है सोइ ॥ तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥ (अंग क्रमांक 13)

हर जीव में एक ही परमात्मा की ज्योति समाई हुई है। उसी परम ज्योति के प्रकाश से सारा संसार प्रकाशित है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी ने जीवनभर इसी गुरुवाणी के संदेश को व्यवहार में उतारा। वे हर व्यक्ति में प्रभु की झलक देखते थे - न कोई छोटा, न बड़ा, न भिन्न, न पराया।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने हमेशा वाहिगुरु के भाणे (उसकी रजा) को मीठा माना।

गुरुवाणी:

तेरा कीआ मीठा लागै॥
हरि नामु पदारथु नानकु माँगै॥
(अंग क्रमांक 394)

हे प्रभु! जो कुछ भी तू करता है, वह मुझे प्रिय और मधुर लगता है।
नानक केवल तेरा नाम ही मांगते हैं — वही सच्चा धन है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी हर हाल को प्रभु की रजा मानकर स्वीकार करते थे। उनके जीवन की एकमात्र कामना - हरि नाम – ही थी।

अर्श

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

स्व. सुरिंदर वीर जी ने गुरुमत के अनुसार अपना जीवन व्यतित किया था।

गुरुवाणी:

गुरमुखि जनमु सवारि दरगह चलिआ।
सची दरगह जाइ सचा पिड़ मलिआ।
(भाई गुरदास जी 19, पउड़ी 14)

जिसने गुरमुख बनकर जीवन सँवारा, वह मृत्यु के पश्चात सच्ची दरगाह में जाकर सच्चे प्रभु से मिलन का सौभाग्य प्राप्त करता है।

भावार्थ:

स्व. सुरिंदर वीर जी ने जीवनभर सेवा और समर्पण से अपना जन्म सफल किया और अब प्रभु की सच्ची दरगाह में प्रतिष्ठित हुए।

अर्श